पूँजीपति और मजदूर तबके के लोग मिले जुले थे। राजाराममोहन राय को नवजागरण के अग्रदूतों में प्रधान व्यक्ति के रूप में गिना जाता है। उनके मन में प्राच्य दार्शनिक विचारों के साथ पाश्चात्य विचार धारा एवं संस्कृति के लिए महत्त्वपूर्ण स्थान था। वे चाहते थे कि देशवासी विवेकशील और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ सभी नरनारियों की मानवीय प्रतिष्ठा और सामाजिक समानता के सिद्धांत को स्वीकार करें। देश में आधुनिक उद्योग-धंधे प्रारंभ हों। उन्होंने १८०९ ई० में अपनी प्रसिद्ध पुस्तक एकेश्वरवादियों को उपहार (गिफ्ट टू मोनोर्थाइस्ट्स) (Gift to monotheists) फारसी में लिखी जिसमें अनेक देवी देवताओं के स्थान पर एकेश्वरवाद का समर्थन किया गया था। उन्होंने धार्मिक और सामाजिक कुरीतियों, रूढ़ियों का विरोध किया; मूर्ति पूजा, जातिवादी कट्टरता और पाखण्डी धार्मिक कृत्य, अंधविश्वास, पुरोहितवाद आदि का खण्डन किया। सन् १८२० में उन्होंने अपनी एक अन्य रचना 'प्रीसेप्ट्स आफ जीसस' में न्यूटेस्टामेंट के नैतिक और दार्शनिक संदेश की प्रशंसा और उसमें वर्णित चमत्कारों की उपेक्षा की। वे प्राच्य और पाश्चात्य दर्शन तथा परंपरा और प्रगति में समन्वय स्थापित करना चाहते थे। स्वाभाविक था कि यथास्थितिवादी और रूढ़िवादी उनका विरोध करें। उन्हें समाज बहिष्कृत कर दिया गया, विधर्मी घोषित किया गया फिर भी वे हताश न हुए और सन् १८२९ में उन्होंने ब्रह्मसमाज की स्थापना करके अपने सुधारवादी आंदोलन की दिशा में क्रांतिकारी कदम रखा। सती प्रथा पर रोक लगाने का कानून उन्हीं के प्रयत्नों का फल था। औरतों को अधिकार दिलाना, शिक्षा का प्रचार करना उनका प्रमुख कार्यक्रम था।

सन् १८३०-४० के बीच कलकत्ता में एक ऐग्लों इण्डियन सज्जन हेनरी विवियन डेरोजियों के प्रयास से यंगबगाल आंदोलन शुरू हुआ। इन लोगों ने मुक्त चिंतन, विवेकशील प्रामाणिक परख, समानता, स्वतंत्रता और सत्यप्रियता पर जोर दिया। वह प्रखर राष्ट्रवादी कवि था। उसने राममोहन राय की विचारधारा को आगे बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। सन् १८३९ई० में देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने राममोहन राय के विचारों के प्रचारार्थ तत्वबोधनी सभा की स्थापना की। इसमें ईश्वरचंनद्र विद्यासागर, अक्षयकुमार दत्त आदि प्रमुख व्यक्ति थे। सन् १८४३ में देवेन्द्र नाथ ठाकुर ने ब्रह्मसमाज का पुनर्गठन किया। इन व्यक्तियों और संस्थाओं के साथ ही आधुनिक भारत के निर्माताओं में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का नाम विशेष रूप से स्मरणीय हैं।

पश्चिम भारत पाश्चात्य विचारों के प्रभाव क्षेत्र में बंगाल के बाद आया क्योंकि १८१८ से पूर्व पश्चिम भारत का कोई भूभाग ब्रिटिश नियंत्रण में नहीं आया था सन् १८४९ में परमहंस मंडली की स्थापना महाराष्ट्र में की गई। इसके संस्थापक भी एकेश्वरवाद में विश्वास करते थे। तथा जाति पाति के भेदभाव नहीं मानते थे, अवर्णों के हाथ का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बनाया भोजन करते थे। सन् १८४८ में कुछ शिक्षित युवकों ने साहित्यिक और वैज्ञानिक समिति की स्थापना की जिसकी दो शाखायें गुजराती और मराठी 'ज्ञान प्रसारक' मंडलियाँ थी। ये लोग नारी शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। ज्योतिबा फुले और उनकी पत्नी ने १८५१ ई० में पुणे में एक बालिका विद्यालय खोला और उसकी देखा देखी अन्य कई विद्यालय खुले। फुले महाराष्ट्र में विधवा विवाह आन्दोलन के अग्रदूत थे। विष्णु शास्त्री पंडित ने विधवा पुनर्विवाह मंडल की स्थापना की। अन्य समाज सुधारकों में गोपालहरि देशमुख, लोकहितवादी मंडल और कर्सन दास मूल जी के प्रयत्न भी उल्लेखनीय है। ज्योतिबाफुले माली परिवार में जन्में थे, वे अछूतों की दयनीय दशा के भुक्त भोगी थे अत: उन्होंने ऊँची जातियों के वर्चस्व के विरूद्ध अभियान चलाया। पारसी संप्रदाय के अगुआ दादाभाई नौरोजी ने 'पारसी ला असोसियेशन' की स्थापना की। इस संस्था ने भी नवजागरण में अपना अंशदान दिया। मुस्लिम संप्रदाय में यह काम कुछ हद तक सर सैयद अहमद खाँ ने किया। इन सब महापुरुषों और संस्थाओं के क्रियाकलापों से जन साधारण ने जागरण की प्रथम अँगड़ाई ली। लोग अपने अधिकारों के प्रति सचेत हुए और कम्पनी के शोषण तथा राष्ट्रीय अपमान से मुक्ति के लिए संगठित हुए। फलत: १८५७ में देश का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम हुआ।

सन् १८५७ का विद्रोह-

यह विद्रोह कम्पनी प्रशासन के विरूद्ध जनता की संचित शिकायतों और विदेशी राज के प्रति उसकी नापसंदगी का परिणाम था। यद्यपि इसकी शुरूआत सिपाही-विद्रोह से हुई किन्तु इसका वास्तविक कारण व्यापक जन असंतोष था। कम्पनी के काले शासन ने देश के कृषकों, शिल्पियों, दस्तकारों और पुराने भूस्वामियों का इतना उत्पीड़न-शोषण किया था कि सभी उससे छुटकारा चाहते थे। गोद न लेने की नीति के कारण देशी रजवाड़े भी असंतुष्ट थे। भारतीय उच्चवर्ग के लोग भी ऊँची सरकारी नौकरियाँ नहीं पाते थे। ईसाई मिशनरियों की गतिविधि तेज हो गई थी और धर्मप्राण जनता के मन में यह भय भर गया था कि अंग्रेजी राज उनके धर्म के लिए खतरा है। १८५६ में अवध के नवाब वाजिदअलीशाह को अयोग्य ऐय्याश घोषित करके उसे राज्यच्युत किया गया था। वादा यह किया गया कि नवाब को हटाकर प्रजा को कम्पनी शासन द्वारा अधिक सुख सुविधा दी जायेगी। पर ये दोनों बातें जब झूठी निकली तो देश के केन्द्र प्रदेश अवध में व्यापक जनरोष उमड़ा। उधर नाना साहब और लक्ष्मीबाई के साथ जो अन्याय हुआ था उसके विद्रोह की लहर अवध से झांसी तक फैल गई थी।

सिपाही विद्रोह नये कारतूसों को लेकर शुरू हुआ जिन्हे मुंह लगाना पड़ता था और जिसमें चर्बी लगी होने की बात फैल गई थी, यह भी धर्म पर आघात समझा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org